कीर्तन द्वारा मन की एकाग्रता और बुद्धि से देखना

ॐ - कीर्तन, कीर्तन क्यों किया जाता है, एक सवाल है। तो अगर देखा जाये, इस लिये किया जाता है ताकि मन को एकाग्र कर लिया जावे। क्योंकि मनुष्य मन स्थिर नहीं; चंचल है, बहुत उच्छृंखल है, बहुत उछल कूद करता है। इसे कंट्रोल करने के लिये कीर्तन, भजन, या भक्ति वगैरा किया जाता है। जितना भी कीर्तन, भजन या भक्ति या कुछ भी तुम करता है इसका उद्देश्य मन को एकाग्र करने का ही एक तरीका है।

मन को एकाग्र करने पर उसके अंदर बड़ा भारी शक्ति नज़र आएगा। जब तक यह एकाग्र नहीं होता, तब तक हमारा जितना भी क्रिया-कलाप है वह फजूल नज़र आता है। एकाग्रता ही वास्तव में संसार का उद्देश्य है। मनुष्य संसार के अंदर जितना भी काम करता है वह मन की एकाग्रता के लिये ही करता है। एकाग्रता के ज़रिये से ही पढ़ता है। कोई भी काम यदि पूर्ण करना हो तो बिना एकाग्रता के कभी भी पूर्ण नहीं हो सकण्ता। किसी भी विषय को समझना हो, एकाग्र होना लाज़मी है। बच्चों ने यदि पढ़ना हो, कोई भी काम करना हो तो लाज़मी है मन को एकाग्र करना होगा। एकाग्रता के बिना कोई भी काम कभी नहीं हो सकता। इससे सिद्ध होता है दुनियां में जितने भी काम होता है एकाग्रता की वजह से ही होता है। बिना एकाग्रता के सृष्टि का कोई काम हो ही नहीं सकता।

वास्तव में एकाग्रता जितना जितना बढ़ता जायगा उतना ही बड़ा भारी शक्ति मन में तुम्हें नज़र आएगा। मन के पीछे एक ऐसी शक्ति है जो सृष्टि, स्थिति, संहार करती है। यह संसार सारा उसी से ही है। उसी से ही सृष्टि का प्रादृर्भाव होता है, उसी से ही यह कायम रहता है, उसी की शक्ति के ज़रिए यह सारा काम होता है। वह शक्ति हमें प्रतीत नहीं होती। मन-बुद्धि के ज़रिए से ही वह हरकत करता है तो मालूम होता है कि हमारा मन काम कर रहा है, बुद्धि काम कर रहा है, इन्द्रियां काम करती हैं। ये सब चीज़ें, भिन्न भिन्न हमें काम करती हुई नज़र आती हैं। उस से भिन्न कोई पदार्थ काम नहीं कर सकता। इन्द्रियां वगैरा जो कुछ काम करता है, उसके पीछे छिपे चैतन्य-तत्व के ज़रिए से ही यह सब कुछ काम करने में समर्थ है। उसके अभाव में यह कोई भी काम नहीं हो सकता।

उस चैतन्य-शक्ति का जब मनुष्य के साथ सम्बंध होता है, बुद्धि के साथ सम्बंध होता है, यह सृष्टि सब तैयार होकर हमारे सामने खड़ा हो जाता है। जब तक कल्पना नहीं होता तब तक सृष्टि का कोई अस्तित्व हमारे सामने खड़ा हो ही नहीं सकता। कल्पना कब होता है? कल्पना होने पर सृष्टि प्रतीत होता है? थोड़ी देर के लिये विचार करो जब सुषुप्ति अवस्था में हम जाता है तब कल्पना थोड़ी देर के लिये लय रहता है। कल्पना लय होता है तो सृष्टि का कोई अस्तित्व नहीं होता।

सृष्टि कब नज़र आता है? जिस टाईम पर हमारे मन में कल्पना शुरु हो जाती है। कल्पना शुरु होते ही सूक्ष्म-सृष्टि शुरु हो जाती है। यह सूक्ष्म-सृष्टि ही स्थूल-सृष्टि के रूप में हमारे सामने आती है। जिसे जाग्रत-अवस्था कहते हैं, स्वप्न-अवस्था कहते हैं, सुषुप्ति-अवस्था के अंदर जाकर ये तीनों लय रहते हैं। इन तीनों अवस्थाओं में हम सब घूमते हैं, मगर ये तीनों अवस्थाएं स्वयं कुछ कर्म करने में समर्थ नहीं होती। किसी के ज़रिए से ही यह काम करती हैं।

अगर देखा जाए तो उसमें एक ऐसा पदार्थ है जिसके ज़रिए से मन, बुद्धि और कल्पना आदि काम करता है। क्योंकि मन, बुद्धि के अंदर जितना भी संकल्प-विकल्प उठता है, यह संस्कार-जन्य होता है। जो संस्कार हमारे अंदर छिपा होता है, वही संकल्प, विकल्प के रूप में प्रगट होता है। पिछले समझ लो या अगले समझ लो, यह नहीं कहा जा सकता कि कौन से जन्म का संस्कार कब काम करता है।

जब से सृष्टि बनी है, तब से ही ये जीव सारे के सारे वर्तमान हैं और जितने भी हज़ारों करोड़ों शरीर छोड़े गये मगर आप का सूक्ष्म शरीर कभी भी नष्ट नहीं हुया। आगे भी कई करोड़, अरबों संस्कार को लेकर खड़ा है। इस टाईम पर जो कुछ भोग, जो कुछ कल्पना होती है, यह किस जन्म के संस्कार का भोग है, कहना बड़ा भारी कठिन है। भिन्न भिन्न शास्त्र इसके मुत्तलिक कुछ भी नहीं कह सकते, क्योंकि इसके अंदर इनकी गति नहीं है। यह अचानक ही प्रतिक्रिया होता है, जिसके बारे हम सोच भी नहीं सकते। यह हमारे सामने आ प्रक्ट होता है। इसका मूल कारण है इस के अंदर पड़े हुए संस्कार, यह पता नहीं किस टाईम पर कोई संस्कार हमारे सामने आवें।

मगर यह भक्ति वगैरा इसीलिये महात्माओं ने हमारे सामने रखा है कि पिछले पड़े हुए संस्कार-कर्मों पर किसी प्रकार रोक लगाई जाये क्योंकि जब तक इन्हें रोका नहीं

जायगा, वह प्रवाह कभी भी बंद नहीं होगा। यह प्रवाह चलता रहेगा। हमारा यह चक्र कभी भी खत्म नहीं होगा। आखिर चक्र में कोई भी पड़ना नहीं चाहता। संसार के अंदर जितने भी जीव हैं, ये स्वतंत्र रहना चाहते हैं, शांत रहना चाहते हैं, विकार बिल्कुल नहीं चाहते।

विकार को कोई एक सैकण्ड के लिये भी बर्दाश्त नहीं कर सकता। दिन रात इस विकार को मिटाने के लिये हम प्रयत्न करता है। हम सब निर्विकार रहना चाहते हैं क्योंकि वह निर्विकार भी किसी एक पदार्थ में छिपा हुआ है। उसके अंदर गुण है निर्विकार का, उस निर्विकार की इच्छा हम सब में छिपी हुई है। जब हमारी बुद्धि के अंदर, मन के अंदर कोई विकार पैदा होता है हम उसे मिटाने की कोशिश करता है। सैकण्ड के लिए, आधे सैकण्ड के लिये जब वह मिट जाता है तो हमें कुछ विश्राम मिल जाता है।

मगर स्थायी-रूप से विश्राम नहीं मिलता। अस्थायी विश्राम को कोई नहीं चाहता। हर कोई चाहता है कि विश्राम मिले, स्थायी विश्राम मिले। मगर स्थायी विश्राम उस टाईम पर ही मिलेगा जो अस्थायी पदार्थ बनाता है, उसके अभाव में ही स्थायी विश्राम मिलेगा। देखो तो अस्थायी विश्राम किसके ज़रिए से बनता है? कल्पना के ज़रिए बनता है। क्योंकि महदूद पदार्थ तब बनता है जब कल्पना होता है। कल्पना न हो तो वह लामहदूद होगा। लामहदूद के अंदर ही स्थायी-शांति है। महदूद-अवस्था के अंदर महदूद-शांति मिलेगा, स्थायी कभी भी नहीं मिल सकता।

तो हमारा कहने का मतलब है यह भक्ति वगैरा जो हमें बताया जाता है, उपदेश दिया जाता है, उसका मुख्य उद्देश्य यह है कि मन को किसी प्रकार एकाग्र किया जाए, विकार नष्ट हो जाएं। विकार खत्म होने पर ही धीरे धीरे शांति की तरफ झुकेंगे। जब तक यथार्थ-शांति की तरफ झुकेंगे नहीं तब तक चैन किसी भी तरह मिल नहीं सकता। स्थायी-सुख, स्थायी-शांति हमारा हक है क्योंकि इसके पीछे एक चैतन्य-शक्ति छिपा हुआ है। शांति क्या चीज़ है? उसका पता तो तभी लगेगा जब मन एकाग्र हो जाए। जब तक मन एकाग्र नहीं होता उसका कुछ पता नहीं चलता।

यह चक्र ऐसे ही चलता रहता है। मन कल्पना करता है, कल्पना करने पर वह स्थायी नहीं रहता, स्थायी न होने पर वह कायम नहीं रहता। इसलिये हम दुखी हो जाता है। जब कल्पना होता है तो एक ही किस्म की कल्पना नहीं होता। कोई रजोगुणी होता है कोई

सतोगुणी होता है, तो कोई तमोगुणी होता है। भिन्न भिन्न किस्म का मिश्रित-कल्पना होता है। इस मिश्रित-कल्पना का नतीजा भी मिश्रित होता है। एक जैसा कभी भी नहीं होता।

जैसे एक मनुष्य है। सवेरे से शाम तक जितने भी संकल्प करता है, जितने भी काम करता है, गहराई से देखें तो ये तीनों किस्म के गुण मिश्रित होकर नतीजा भिन्न भिन्न होगा। जैसे जैसे हम काम करते हैं, वैसे वैसे हम संस्कार भी बनाते हैं। ऐसी कोई क्रिया नहीं होगी जिसका बुद्धि के अंदर संकल्प न बनता हो। कोई ज्ञानी, जैसे गीता के इस रहस्य को समझने वाला ज्ञानी हो तो उसकी बुद्धि में कर्म का संस्कार न पड़े, यह ठीक है। पर आम तौर पर ऐसा नहीं होता

आम आदमी तो ऐसे होता है-काम करना, काम का संस्कार पड़ जाना, पुनः काम करना, उसका संस्कार बन जाना। जैसे सवेरे से शाम तक हम ने कोई काम किया, उस काम का संस्कार बन जाता है। उसी संस्कार को लेकर हम सो जाता है। कर्म को हम उसी टाईम पर छोड़ देते हैं, मगर कर्म का संस्कार बुद्धि में बनता रहता है क्योंकि उसी संस्कार के ज़रिए से सुबह वहीं से शुरू करता है जहां पहले छोड़ा था। यह सिलसिला मासों गुज़र जाते हैं, वर्ष गुज़र जाते हैं, एक जन्म गुज़र जाता है, उसी जन्म का संस्कार लेकर अगला जन्म हुआ, आगे फिर उसी संस्कार के मुताबिक कर्म किया, फिर संस्कार बना, फिर जन्म लिया।

इसी चक्र में पड़ा रहता है। एक बड़ा भारी चक्र में पड़ा रहता है। एक बड़ा भारी चक्र है, इससे निकलना बड़ा भारी कठिन है। मगर महात्मा लोगों ने हमें यह शिक्षा दिया कि किसी प्रकार से मन को एकाग्र बना दिया जावे तो लाज़मी है इसके अंदर से निकलने के लिये तुम्हें रास्ता मिल जाएगा। रास्ता खुद-ब-खुद मिल जाता है। रास्ते के लिये तुम्हें कहीं दूर जाने की आवश्यकता नहीं। मन को एकाग्र करके देखो, रास्ता इसके अंदर साफ ही है, कोई रूकावट नहीं। वह कहीं और नहीं। मगर मन एकाग्र किए बिना वह रास्ता कभी भी नज़र नहीं आयेगा।

मन एकाग्र करने के लिये भिन्न भिन्न तरीके हमारे सामने रखे गये। कोई सामूहिक, कोई कीर्तन करता है, कोई किसी टाईम करता है, कोई किसी तरह करता है, कोई वेद का अनुसंधान करता है, भिन्न भिन्न तरीके हैं मन को एकाग्र करने के। इस सारे का मुख्य उद्देश्य जो होता है, मन को किसी न किसी तरह एकाग्र करना ही होता है। मन

एकाग्र होने पर ही हमें शांति मिल सकता है। जब तक मन एकाग्र नहीं होता, तब तक शांति नहीं मिल सकती किसी भी सूरत में।

मगर शांति का हमारे अंदर अभाव भी नहीं। यह नहीं समझना कि शांति हम से कहीं दूर चला गया। शांति हम से दूर मान लिया जावे तो शांति की इच्छा हमारे अंदर कभी भी पैदा नहीं हो सकती ! जिस किसी चीज़ की इच्छा हमारे अंदर पैदा होता है, लाज़मी है वह चीज़ हमारे अंदर पहले से ही मौजूद है। जिस चीज़ का अभाव मान लिया जावे तो उसकी इच्छा कभी भी पैदा नहीं हो सकती!

यह अखण्ड-शांति की इच्छा हरेक के अंदर देखने में आती है। इससे सिद्ध होता है कि एक अखण्ड-शांति हमारे अंदर पहले से ही छिपा हुआ है। लाज़मी है हम इसी अखण्ड-शांति को प्राप्त करने के लिए कोशिश करते रहते हैं। महदूद (सीमित) शांति को कौन चाहता है? शांति भी मिले और वह नष्ट हो जाये, ऐसा कोई भी नहीं चाहता। हर कोई चाहता है कि हमें शांति भी मिले, अखण्ड-शांति मिल जावे।

यह शांति तुम्हें एक ही जगह जाकर मिल सकती है। जिसे हम ईश्वर कहता है, चैतन्य कहता है या भिन्न भिन्न नामों से उसे पुकारा जाता है। वैसे कोई एक नाम नहीं है उसका। नाम की हम कल्पना करते हैं। उसके गुणों को देखकर हम कल्पना करते हैं। ये सारे नाम जो हैं, ये उस चैतन्य-स्वरूप ईश्वर के ही विशेषण हैं। उस नाम को लेकर हम उसकी ओर बढ़ने का कोशिश करते हैं। ज्यों ज्यों इधर बढ़ते जाऐंगे, बढ़ते जाऐंगे, बुद्धि के अंदर छिपे हुए विकार भी अपने आप नष्ट होते चले जाएंगे। क्योंकि वह चैतन्य के बिना, विकार भी विकार नहीं हो सकता। विकार को विकार सिद्ध करने के लिये चैतन्य की बड़ा भारी आवश्यकता है।

चैतन्य के बिना हम विकार, अविकार सिद्ध नहीं कर सकते। चैतन्य को सिद्ध करना है। विकार को नष्ट करना है, चैतन्य होना लाज़मी है। वह चैतन्य ही ईश्वर है। जिस टाईम पर विकार के अंदर भी चैतन्य नज़र आएगा उस टाईम पर विकार विकार नहीं रहेगा ! विकार नहीं रहेगा, वह निर्विकार हो जाएगा। उस निर्विकार-अवस्था में जाकर ही सत्य का पता चलता है, यथार्थ का पता चलता है। जब तक हम निर्विकार नहीं होते तब तक यथार्थ सत्य का पता भी नहीं लग सकता। ज्यों ज्यों एकाग्रता बढ़ती जायेगी, त्यों त्यों

निर्विकार-अवस्था आती जायेगी। तो, निर्विकार जो स्थिति है वह स्थिति खुद-ब-खुद आती जाएगी।

इसके लिए प्रयत्न करने की कोई ज़रूरत नहीं; कुछ समय ही हमें प्रयत्न करने की ज़रुरत है, जब तक इस मन को एक तरफ मोडेंगे नहीं तब तक प्रयत्न करने की ज़रुरत है। एक बार मन को मोड़ लिया तो वह खुद-ब-खुद उस तरफ चला जाता है। जैसे आजकल की साईंस ने सिद्ध किया है। पृथ्वी के आकर्षण से ऊपर जो राकेट चला जाता है, जिस ग्रह का आकर्षण प्रबल होता है, खुद-ब-खुद उधर खींचा चला जाता है। कोई प्रयत्न करने की बिल्कुल ज़रुरत नहीं होती। खुद-ब-खुद खींचा चला जाएगा।

इसी तरह जब तक हमारा मन ईश्वर के आकर्षण में नहीं जाता, तब तक हमारा मन भटकता रहता है, भूल जाता है, तब तक हमें कुछ मेहनत करना होता है। कीर्तन के ज़रिए से, समाधि के ज़रिए से, या जप के ज़रिए या किसी भी ढंग से उसे हम पृथ्वी के आकर्षण से ऊपर उठाने की कोशिश करते हैं। मन के आकर्षण, बुद्धि के आकर्षण से ऊपर उठाने की कोशिश करते हैं। इस आकर्षण से ऊपर उठते ही, हम ईश्वर के आकर्षण के अंदर पहुंच जायेंगे तो फिर हमें कोई कर्त्तव्य नहीं करना होगा। यही यथार्थ निष्काम्यता है। इस निष्काम्यता के अंदर कोई बंधन नहीं होगा क्योंकि उसके अंदर कोई कामना नहीं है। कामना-रहित होकर जो कर्म किया जाता है उसका संस्कार कभी भी नहीं बनता

संस्कार बनता ही, कामना युक्त कर्मों से है। इसी से संस्कार बनता है। कामना न हो तो किसी किस्म का संस्कार नहीं बनता है। कामना न होने पर बुद्धि जो है यह सिद्ध होने लग जाता है। ज्यों ज्यों बुद्धि सिद्ध होने लग जायेगी त्यों-त्यों यथार्थ शांति का तुम्हें अनुभव होने लग जाता है। यह अनूभव खुद-ब-खुद है क्योंकि किसी के ज़रिए से वह अनुभव नहीं होगा, उसका अनुभव किसी के ज़रिए तुम नहीं कर सकते। बुद्धि के ज़रिए से भी ईश्वर का अनुभव तुम नहीं कर सकते। बुद्धि किसका अनुभव करता है? बुद्धि द्वारा कल्पित-पदार्थ का ही हम अनुभव कर सकता है क्योंकि जिसे बुद्धि कल्पित नहीं कर सकता, बुद्धि उसे समझ ही नहीं सकता, न ही उसे प्राप्त कर सकता है।

हां, मगर बुद्धि का विकार दूर होने के बाद जो चीज़ बचा हुआ है, वही चैतन्य-सत्ता ही बचा हुआ है। वही हमारा लक्ष्य है। इसके अंदर किसी किस्म का विकार

नहीं। अभी भी तमाम संसार उसी के चक्र में ही फिरता है। जो भी, जिसे हम नास्तिक भी कहता है वह भी इसी के चक्र में घूमता है। प्रकार-भेद से, प्रकार में भेद हो सकता है, मगर चाहते तो वे भी उसी को हैं। ऐसा कोई व्यक्ति नहीं होगा कि जो ईश्वर को नहीं चाहता हो। जो ईश्वर को जानने वाला है, वह जानता है कि ईश्वर के भाव से कोई भी बाहर नहीं हो सकता। हर कोई उसी को चाहता है। चाहने के बावजूद भी हम गल्त ढंग से उसे प्राप्त करने का कोशिश करते हैं। इसमें हमें कामयाबी नहीं होती।

जैसे आप के मकान की तरफ मूंह करके हम चलते जायेंगे तो किसी न किसी टाईम उस मकान के अंदर हम पहुंच ही जायेगा। इसके विपरीत मूंह करके हम हज़ारों साल भी घूमता रहे तो आप का मकान कभी भी नहीं मिल सकता। इसी प्रकार गलत ढंग से हम परमात्मा को या शांति को प्राप्त करने की कोशिश करते हैं इसमें कामयाबी कभी भी नहीं मिलती।

शांति प्राप्त करने की कोशिश करो, लाज़मी है कि कभी न कभी मिल जायेगा, वह प्राप्त हुये बिना नहीं रह सकता। क्योंकि ईश्वर ऐसा पदार्थ है जो हमें हमेशा मिला हुआ है ! वह हमेशा हमारे अंदर मिला हुआ है ! वह कभी भी हम से दूर नहीं होता ! यह आनंद की, सुख की इच्छा जो हमारे अंदर छिपा हुआ है यह उसी के कारण है। वह आनंद-स्वरूप ईश्वर हमारे अंदर छिपा होने के कारण वह आनंद की इच्छा बार-बार हमारे अंदर उठती रहती है।

वह हम से दूर नहीं; मगर किसी कारण वश, या भूल है या संस्कार है, किसी प्रकार हम उसे भूल गया है। उस भूल को मिटाने के लिये ही हम कोशिश करता है। ईश्वर की प्राप्ति के लिये नहीं; मैं पहले कह चुका उसे तुम प्राप्त नहीं कर सकते हो। केवल भूल को सुधार सकते हो। जब भूल सुधर जायेगा, ईश्वर स्वयं सिद्ध हो जायेगा। वह मिला हुआ है। ऐसा कोई जगह नहीं जिस जगह के अंदर ईश्वर मौजूद न हो। ईश्वर जहां कहीं मौजूद नहीं; वहां उसका अस्तित्व कभी भी सिद्ध नही हो सकता। यह जो क्रिया नज़र आती है, जिसके अंदर हरकत नज़र आती है, उठते बैठते, खाते-पीते, सोते-जागते, वृक्ष लता आदि या पत्थर जिसे हम कहते हैं, वे सब चैतन्य-शक्ति से ही है। वह चैतन्य शक्ति न हो तो पत्थर का पत्थर नहीं बन सकता। उसके अंदर करड़ापन है, करड़ापन जो है, वह भी गुण होता है,

वह भी एक क्रिया-शक्ति होती है। इसी प्रकार जो ठोसपन नज़र आता है, वह भी एक क्रिया ही है। वह क्रिया की वजह से ही ठोस नज़र आता है।

इस प्रकार इस दृष्टि से देखें तो सृष्टि के हर अणु-अणु के अंदर वही चैतन्य ही छिपा हुआ है। उससे भिन्न कोई पदार्थ कभी सिद्ध हो ही नहीं सकता। हमारे शरीर के अंदर, अणु-अणु के अंदर, इस दरी के अंदर जिस पर तुम अभी बैठा हुआ है, अनुसंधान करके देखो तो दरी में भी वही चैतन्य-शक्ति छिपा हुआ है। यह चैतन्य-ईश्वर उसके अंदर छिपा हुआ न हो तो उससे गर्मी नहीं हट सकती, ठण्ड नहीं हट सकती। चैतन्य न हो तो यह कोई हिफाज़त (सुरक्षा) नहीं कर सकती, यह हिफाज़त जो करती है, यह सब क्रियाशीलता है। इसी प्रकार यह टैंट जो लगा हुआ है, यह भी एक चैतन्य-शक्ति ही है। यह तुम्हें धूप से बचाता है, सब कुछ करता है। इसीलिये यह चैतन्य-शक्ति ही इसमें छिपा हुआ है।

इसी तरह हर चीज़ के अंदर, हर पदार्थ के अंदर तुम गहराई से देखो तो वह चैतन्य ही चैतन्य सब जगह समाया हुआ है। उसे पाने के लिये कहीं दूर जाने की आवश्यकता नहीं होती। उस ईश्वर को, प्रत्यक्ष ईश्वर को, पाने के लिये हम बार-बार अनुसंधान करते जायें तो हमारी बुद्धि के अंदर छिपा हुआ जो ईश्वर-शक्ति है, चैतन्य-शक्ति है, वह जाग्रत होना शुरु हो जायेगा। ज्यों-ज्यों हम इस तरफ बढ़ते जायेंगे त्यों-त्यों एकाग्रता भी बढ़ती जायेगी। मैं पहले कह चुका हूं किसी प्रकार ईश्वर के आकर्षण के अंदर हम पहुंच जायें तो फिर हमें मेहनत करने की कोई ज़रुरत नहीं रहेगी। खुद-ब-खुद खिंचता हुआ उस तरफ चला जायेगा।

यह सम्पूर्ण निष्काम्यता, बिल्कुल स्वतंत्र-अवस्था होती है। इसके अंदर कोई बंधन नहीं। सृष्टि भले ही उलट-पुल्ट हो जाए, हम पर कोई असर नहीं हो सकता, बिल्कुल स्वतंत्र-अवस्था होता है। इसकी प्राप्ति के लिये सृष्टि के अंदर हर जीव कोशिश करता है। संसार के अंदर ऐसा कोई भी जीव नहीं जो कोशिश न करता हो, जो बंधन के अंदर रहना चाहता हो, एक सैकण्ड के लिये भी कोई परतंत्रता बर्दाश्त नहीं करता। छोटा से छोटा कीड़ी को भी तुम परतंत्र करने की कोशिश करो, बिल्कुल भी वह बर्दाश्त नहीं करेगी। जो परतंत्र भी होता है, उसका दिल कभी भी नहीं चाहेगा वह परतंत्र रहे। हरेक जीव की एक-मात्र इच्छा स्वतंत्रता है। स्वतंत्रता कहां हो सकता है? वह तो ईश्वर के अंदर ही मिल सकता है। उससे भिन्न जहां कहीं भी देखोगे, यह परतंत्र सिद्ध होगा।

क्योंकि, मन परतंत्र होता है। परतंत्रता का संस्कार मन में होता है। सवेरे से शाम तक हम चारों तरफ से बंधन के अंदर फंसा हुआ है। यह परतंत्रता होगा। किसी के बंधन के अंदर फंस जाना ही परतंत्रता है। किसी किस्म का बंधन न हो तो वह स्वतंत्र- अवस्था है। वह ईश्वर ही होता है और यही स्वतंत्रता हमारा लक्ष्य होगा। अर्थात् तमाम संसार का एकमात्र लक्ष्य यही स्वतंत्रता है। स्वतंत्रता में ही आनंद छिपा हुआ है। परतंत्रता के अंदर कभी भी आनंद नहीं हो सकता। तुम किसी भी दृष्टि से देखो, तुम जिस समय परतंत्र होते हो उस टाईम पर तुम कभी भी आनंद का अनुभव नहीं कर सकते।

आनंद कब मिलता है? जब किसी किस्म का बंधन न हो, कोई परतंत्रता न हो तभी आनंद मिलता है। आनंद जो मिलता है, वह स्वतंत्र अवस्था के अंदर ही मिलेगा। जब बुद्धि स्वतंत्र होगा तो आनंद मिलेगा। जब बुद्धि परतंत्र होगा, आनंद किसी भी सूरत में नहीं मिलेगा। इस स्वतंत्र- अवस्था के लिये संसार में जितने हम सब काम करते हैं, उद्देश्य तो यही है। स्वतंत्र होना हो तो मन के विकार को खत्म करना होगा, मन को एकाग्र करना होगा। जब तक ऐसा नहीं होता, तब तक कभी भी स्वतंत्र नहीं हो सकते।

मन ! मन की चंचलता ही परतंत्रता है। जितना भी विकार मन में पैदा होता है, मन की परतंत्रता की वजह से पैदा होता है। मन विकारों से रहित होगा तो स्वतंत्र होगा। विकारों से रहित करना है तो इसे एकाग्र करना होगा। जब ऐसा करने की हम कोशिश करते हैं तो भिन्न भिन्न तरकीबें हमारे सामने आती हैं। कोई कीर्तन करता है, कोई भजन करता है, कोई योग करता है। जितने ढंग से हो, जिस प्रकार से भी हो, मन को एकाग्र करना ही हमारा लक्ष्य है। मन एकाग्र होने के बाद वह शांति हमें मिलेगा। शांति के लिये ही सारा संसार भागा फिरता है। तमाम संसार एक तरफ होकर चिल्लाता है, और चाहता है, जो कुछ भी करता है। शांति के लिए ही करता है।

अभी साईंटिस्टों ने जितना उन्नति किया, उसका भी गहराई से अनुसंधान करके देखें तो उसका उद्देश्य भी किसी न किसी प्रकार से शांति प्राप्त करना ही है। जो अणु बनाया गया, उसका परिणाम भले ही अशांति हो, मगर उसका उद्देश्य तो यही शांति था। यदि शांति के उद्देश्य को छोड़ दिया जाये तो सृष्टि का कोई काम कभी हो ही नहीं सकता। सवेरे से शाम तक जितने भी काम तुम करते हो, ये सारे के सारे शांति प्राप्त करने के उद्देश्य को मद्दे नज़र रख कर ही तुम करते हो।

मन किसी तरह शांत हो जाय, मन के अंदर कल्पना उठता है। यह चाहिये, वह चाहिये, यह कल्पना उठते ही अशांति पैदा होता है। उस अशांति को मिटाने के लिये उसे वही चीज़ को मुहईया करने की कोशिश करते हैं। उस चीज़ से भी मन भरता नहीं, किसी भी सूरत में नहीं भर सकता। क्योंकि मन को तुम सृष्टि के पदार्थों से भरने की कोशिश करते हो वह भर नहीं सकता। सृष्टि की उत्पत्ति वैसे मन से ही होता है।

मन ने ही इसे फैला के रखा हुआ है। इसी के ज़रिये उसे भरने की कोशिश करें, कभी भी शांत नहीं होगा। यह भरेगा उसी सूरत में जो ईश्वर का स्मरण है, ईश्वर का भजन है, ईश्वर का अनुसंधान है। इसी से यह भर सकता है और किसी भी पदार्थ से भर नहीं सकता है। इस रहस्य को कुछ महात्मा लोगों ने समझा था, उन्होंने हमारे सामने यह रखा कि उस अखण्ड-शांति को तुम ने प्राप्त करना है तो मन पर तुम्हें कंट्रोल करना होगा। इसी लिये मन को किसी न किसी प्रकार से एकाग्र बनाने की कोशिश करो।

यह मन कैसे एकाग्र बनाया जाता है? जैसे यह सतोगुणी एकाग्रता है, रजोगुणी एकाग्रता है, तमोगुणी एकाग्रता है, इन सब का नतीजा भिन्न भिन्न होगा। अभी तमोगुणी एकाग्रता के अंदर भी बड़ा भारी शक्ति प्राप्त होती है। कोई भी चमत्कार दिखलाया जा सकता है। रजोगुणी एकाग्रता से भी सब कुछ हो सकता है, सतोगुणी एकाग्रता से भी यह सब कुछ हो सकता है। मगर यथार्थ एकाग्रता जो है वह बिल्कुल निर्गुणी-अवस्था है। उसके अंदर कोई भी गुण सम्मिलित नहीं होगा। गुण के ज़रिए से जो एकाग्रता होती है, वह किसी न किसी तरह के बंधन का ही कारण बनेगा। सब कोई गुण-रहित या निर्गुण-एकाग्रता को चाहता है।

तो लाज़मी है कि बुद्धि को स्थिर करना होगा, बुद्धि के विकार को मिटाना होगा, सतोगुणी-भाव से ईश्वर का स्मरण करना होगा। सतोगुणी-भाव से चिंतन करते रहिए, रजोगुण और तमोगुण को छोड़ कर सतोगुणी-भाव से ईश्वर का बार बार स्मरण करते रहिए, चिन्तन करते रहिए, अनुसंधान करते रहिये। धीरे धीरे उस गुण से आगे बढ़कर हम गुण-रहित अवस्था प्राप्त कर सकेंगे, क्योंकि ईश्वर के अंदर कोई गुण प्रवेश नहीं कर सकता। मन और बुद्धि के अंदर ही यह गुण स्थायी-रूप से रहते हैं। गाढा नींद के अंदर, सुषुप्ति के अंदर, गुण काम नहीं करते। सुषिप्ति-अवस्था से स्वप्न-अवस्था में आते हैं तो गुण कुछ विकसित हो जाते हैं। वही गुण फिर स्थूल में आकर पूरी तरह विकसित हो जाते हैं

और हमारे बंधन का कारण बनते हैं। यह गुण-रहित अवस्था जो है, यह सूक्षम अवस्था का नतीजा है जो बार-बार संसार की क्रिया के अंदर तुम्हें मिलता रहता है।

किसी भी काम को करना है, जब तक पहले काम को भूलेंगे नहीं तब तक तुम्हें कोई आनंद नहीं आयेगा। आनंद कब मिलेगा? जिस समय विकार को हम भूल जावें तब जाकर आनंद मिल सकता है। जब तक विकार-युक्त होता है, कभी भी आनंद नहीं मिल सकता। यह भूलना किसका होता है, यह सुषुप्ति-अवस्था का क्रिया होता है। यह जाग्रत-अवस्था के अंदर भी सुषुप्ति छिपा हुआ होता है। उस सुषुप्ति-अवस्था की वजह से सृष्टि का सब काम चलता है।

मालूम होगा कि सुषुप्ति के अंदर सृष्टि भासता नहीं, मगर मानना होगा कि सुषुप्ति के बिना सृष्टि कभी चल नहीं सकता। क्योंकि एक काम को छोड़ कर दूसरा करना, दूसरा छोड़ कर तीसरा काम करना, यह सब सुषुप्ति की ही क्रिया है। जाग्रत में सुषुप्ति छिपा हुआ होता है, छिपा होने की वजह से सृष्टि का सारा संचालन होता है। इसीलिये उसे 'कारण' कहते हैं। कारण शरीर है। जाग्रत-अवस्था और स्वप्न-अवस्था का कारण सुषुप्ति है। सुषुप्ति से ही यह पैदा होता है और लय भी सुषुप्ति के अंदर होता है। यह नियम है जो चीज़ जिसका उत्पत्ति जहां से होता है, उसका लय भी उसी में होगा। और कहीं लय नहीं हो सकता। यह प्रत्यक्ष हमें नज़र आता है। यह जाग्रत-अवस्था और स्वप्न-अवस्था जो है यह सुषुप्ति में जाकर लय हो जाता है। इसीलिये मालूम होता है, उसका कारण सुषुप्ति है।

यदि कार्य है तो कार्य के अंदर कारण होना लाज़मी है। कारण के बिना कार्य का कोई अस्तित्व कभी भी सिद्ध नहीं होगा। घड़े का कारण मिट्टी होने की वजह से घड़े के अणु-अणु के अंदर मिट्टी होगा। जाग्रत अवस्था के अंदर भी, स्वप्न अवस्था के अंदर भी वह सुषुप्ति छिपा हुआ होता है। सुषुप्ति की वजह से एक कार्य छोड़ कर दूसरा कार्य तुम करते हो, वहां थोड़ा सा आनंद भी तुम्हें सुषुप्ति की वजह से ही मिलता है।

क्योंकि सुषुप्ति के अंदर इन्हीं भोगों के, इन्हीं सांसारिक आनंदों की अपेक्षा विशेष आनंद सुषुप्ति-अवस्था के अंदर मिलता है। वह सुषुप्ति-अवस्था का आनंद इतना प्रबल होता है कि यह संसार के सारे आनंद मिलकर भी उसके सामने फीके पड़ जायेंगे। जब गाढ़ी नींद आती है तो संसार का कोई भी और आनंद तुम्हें आनंदित नहीं कर सकता है। उस टाईम सृष्टि का कोई भी आनंद तुम्हें आनंदित नहीं कर सकता।

सृष्टि का आनंद कब आनंद देता है? जब तक गाढ़ी नींद नहीं आती। गाढा नींद आता है तो यह सारा आनंद फीका पड़ जाता है। उस सुषुप्ति के अंदर जो आनंद होता है यह तमाम संसार के आनंद की अपेक्षा बड़ा भारी आनंद है। वहां इतना भारी आनंद क्यों मिलता है? उसका मूल कारण है कि वहां पर मन बुद्धि वगैरा लय रहता है, लय रहने की वजह से, उसके अंदर एक विशेष आनंद मिलता है, जब कि वह चैतन्य-शक्ति उस सुषुप्ति-अवस्था के भी पीछे रहता है। सुषुप्ति-अवस्था के पीछे रहकर, सुषुप्ति-अवस्था को भी जाग्रत करता है। वह सुषुप्ति-अवस्था को विकार-रहित बनाता है, सुषुप्ति-अवस्था को क्रिया-शक्ति देता है।

वास्तविक पदार्थ जो है वह उस सुषुप्ति-अवस्था के पीछे छिपा हुआ है। वही हमारा लक्ष्य है। जब तक वह लक्ष्य प्राप्त नहीं होगा, तभी तक हमारी दौड़ कभी भी बंद नहीं होगी। कोई जीव हमें प्रतीत नहीं होता जो उसके पीछे हमेशा भागता रहना चाहता है। मगर दौड़े बिना हम एक सैकण्ड भी नहीं रह सकता। हर सैकण्ड हम दौड़ रहा है। भले ही हम चण्डीगढ़ के अंदर बैठा है, मगर हम चण्डीगढ़ के अंदर कहीं भी बैठा हुआ नहीं है। हम निरंतर दौड़ रहा है। दुनियां के अंदर, तमाम संसार के अंदर हम घूमता रहता है।

यदि हम चण्डीगढ़ में ही रह जावें, हमारी बुद्धि चण्डीगढ़ में स्थिर हो जावे तो भी बहुत कुछ प्राप्त हो जाये। यह तो सूर्य-मण्डल के अंदर पहुंचता है, तारा-मण्डल के अंदर पहुंचता है, नक्षत्रों में पहुंचता है, सब जगह यह पहुंच जाता है। सुबह सूर्य उदय होता है, सूर्य को हम देखता है तो सूर्य के अंदर हम पहुंच जाता है। रात को चंद्रमा को देखता है तो चंद्रमा के अंदर पहुंच जाता है। इसी प्रकार तमाम संसार में हम फैलता है। एक पल के लिये भी हम कहीं भी ठहर नहीं सकते। जब एक सैकण्ड के लिये शांति से हम बैठ नहीं सकते तो यहां सुख चाहें तो कैसे मिल सकता है? कभी भी नहीं मिलेगा। इससे सिद्ध होता है, कि वास्तविक जो सुख है वह इस मन की चंचलता के दूर होने से ही मिलेगा और कहीं नहीं। वहीं सुख मिल सकता है। इससे पहले कभी भी सुख नहीं मिलेगा।

जैसा कि मैं पहले कह चुका, संसार में भी जो थोड़ा बहुत सुख भासता है वह भी उसी की ही थोड़ी सी झलक है। वैसे मन की एकाग्रता के बिना वह सुख नहीं मिलता। यदि एकाग्रता न हो तो किसी भी सूरत में नहीं मिल सकता। तो कहने का हमारा मतलब यही है कि यदि यथार्थ सुख चाहते हो, इस संसार का वास्तविक सुख यदि चाहते हो तो उस

अखण्ड – आनंद को प्राप्त करो। मनुष्य जीवन को छोड़कर किसी भी जूनी में यह खूबी नहीं कि उसे समझ सके, इस आनंद को पा सके। बड़े से बड़ा भी बन जाओ ये सारे के सारे संसारिक वैभव उसके सामने तुच्छ हैं। यदि किसी बड़े से बड़े आदमी को भी सुषुप्ति – अवस्था न आवे, गाढ़ा नींद न आवे तो पागल डिक्लेयर किया जायेगा। उसे पागलखाने भेज दिया जाता है।

सांसारिक पदार्थों के ज़रिए से ही सब कुछ मिलता होता तो जिनके पास सब पदार्थ हैं तो उनको नींद की आवश्यकता नहीं होनी चाहिये। सृष्टि के अंदर जितने भी मनुष्य है, सब को नींद की ज़रुरत है। इसे वह प्राप्त करते हैं और नींद ज़रुरी है। नहीं तो वह पागलखाने जायेगा। अमरीका इतना सम्पन्न देश होने के बावजूद भी, वहां विकार बहुत होने की वजह से, नींद की बीमारी बहुत है। तीन अरब डालर की गोली नींद की, वहां नींद लाने के लिये प्रयोग में लाई जाती है। वैसे कुदरती नींद लाने के लिए खाई जाती हैं मगर नींद नहीं आती, मसनूई (कृत्रिम) नींद लाने की कोशिश करते हैं। क्यों? क्योंकि नींद के बिना गुज़ारा नहीं होता। अगर नींद न हो तो बुरी हालत होती है।

नींद ! नींद क्या होता है? तमाम संसार के पदार्थों को भूली हुई अवस्था को ही नींद कहते हैं। उसका हम इच्छुक हैं। यथार्थ आनंद जो है कि इस संसार की इच्छा जब बुद्धि से निकल जाता है, तब जाकर वह आनंद आता है, उससे पहले वह आनंद नहीं मिलता। हम चाहते भी वही हैं। तो कहने का हमारा मतलब है कि नींद का उदाहरण हमने इसलिये दिया कि मात्र सांसारिक – पदार्थ से भी प्रसन्नता नहीं हो सकता। यथार्थ आनंद कभी भी नहीं मिल सकता है। जिसके पास ये सांसारिक पदार्थ बिल्कुल न हों, वह भी उस यथार्थ आनंद को प्राप्त कर सकता है।

तो ये सांसरिक पदार्थ और उस आनंद में कोई सम्बंध नहीं, बिल्कुल कोई सम्बंध नहीं; यह तो उल्टे जो सांसारिक पदार्थ होता है, उस आनंद से हमें वंचित करता है। हमें उस आनंद के अंदर स्थित होने नहीं देता। यह सांसारिक पदार्थ विकार पैदा करता है। विकार पैदा करके उस आनंद से हमें वंचित करता हैं। इस वजह से हमारा दौड़ कभी भी बंद नहीं होता। इस लिए संसार का बड़े से बड़ा आदमी पकड़ कर तुम देखो, कोई भी तुम्हें सुखी नहीं मिलेगा। संसार में बड़े से बड़ा, जो बहुत सम्पन्न हैं, सांसारिक पदार्थ बहुत अधिक मात्रा में हैं, वे भी अपने आप को अतृप्त पाते हैं। वे भी तृप्त नहीं हैं।

तृप्त अवस्था जब तक नहीं आता तब तक शांति नहीं मिल सकता। संसार के किसी पदार्थ के ज़रिए से किसी की कभी भी तृप्ति हुआ नहीं, न ही हो सकता है। वास्तव में तृप्ति प्राप्त करना हो तो उस आत्म-तत्व की ओर बढ़ो, उस परमात्म-तत्व की ओर बढ़ो, उसका अनुसंधान करो, उसका स्मरण करो। उठते बैठते, चलते फिरते हमेशा उसी का स्मरण करने का अभ्यास करो। हर पदार्थ के अंदर उसे देखने का अभ्यास करो क्योंकि हर पदार्थ के अंदर वह चेतन-शक्ति छिपा हुआ है।

मैं पहले कह चुका कि ऐसा कोई नहीं मिलेगा जिसके अंदर वह चैतन्य-शक्ति न हो, जिसके अंदर वह क्रिया-शक्ति न हो। ऐसा दुनिया के अंदर कोई पदार्थ नहीं, हर पदार्थ में उसे देखने का अभ्यास करो। वह क्रिया-शक्ति जो है वह परमात्मा ही है। परमात्मा के अलावा कोई क्रिया-शील नहीं होगा। वह एक समष्टिगत क्रिया है। तमाम संसार की क्रिया वही है। उस क्रिया में ही, उपाधि की वजह से पर्दा पड़ जाता है। पर्दा पड़ जाने की वजह से वह क्रिया हमें नहर नहीं आती। क्रिया चलते होने के बावजूद भी उसे देखने में हम असमर्थ रहता है। वास्तव में एक ही क्रिया सब जगह के अंदर काम करती है। यह जो क्रियाशीलता है, तमाम सृष्टि के अंदर वही एक क्रिया ही क्रिया करता है। तमाम सृष्टि-पशु-पक्षी, वृक्ष-लता आदि जो पड़ा हुआ है, इसके अंदर भी वही क्रियाशीलता है। एक ही क्रिया है, अलग-अलग कोई क्रियाशीलता नहीं। हमारे अंदर भी वही क्रियाशीलता है, पशु के अंदर भी, पक्षी के अंदर भी है। जितने भी जो पदार्थ नज़र आते हैं सब के अंदर क्रियाशीलता है।

देखो न, यह पेड़ खड़ा है, वह हरा है भरा है, सब कुछ दिखलाता है, फूलता है, यह सब क्रिया के ज़रिए से होता है। क्रिया न हो तो ये फल-फूल कुछ भी नहीं हो सकते, वह खिल नहीं सकता, अपनी खुराक नहीं खींच सकता। जब वह खुराक खींचता है, हवा-पानी खींचता है, सब कुछ करता है तो उसके अंदर क्रियाशीलता है। जैसे हमारे अंदर क्रियाशीलता है वैसे इसके अंदर भी क्रियाशीलता है। इसी प्रकार संसार के हर पदार्थ के अंदर तुम्हें वह क्रियाशीलता प्रत्यक्ष नज़र आएगी। यदि उस क्रियाशीलता के अंदर हमारी दृष्टि किसी न किसी प्रकार पड़ जाए तो हमारा कल्याण होने में कोई देरी नहीं

ईश्वर दूर नहीं। ईश्वर कभी भी दूर नहीं। ईश्वर जैसा नज़दीक कोई है ही नहीं है। वैसे अत्यंत नज़दीक जो होता है वह नज़र नहीं आता। यह बिल्कुल नज़दीक होने की वजह से हमें नज़र नहीं आता। वह नज़र कब आयेगा? जब अपने आप को छोड़ दिया जावे

तो वही बचेगा, और कुछ भी बाकी नहीं रहेगा। यह सृष्टि सारा ईश्वरमय है। ईश्वर के अलावा इसमें कुछ भी नहीं है। यही यथार्थ-ज्ञान है, यही यथार्थ-भक्ति है। जिसे, यदि यह भक्ति मिल गया, आत्म-समर्पण बगैरा कहता है, नवधा भक्ति के अंदर आत्म-समपर्ण जिसे कहता है, वही स्थिति है। इस अवस्था के अंदर जाकर ही तुम्हें शांति मिल सकता है। उससे पहले शांति कभी भी नहीं मिलेगा, चाहे कितना भी तुम कोशिश कर लो।

तो कहने का हमारा मतलब है यह जो भक्ति है, भजन है, कीर्तन है, चाहे जो कुछ भी कर लो, इसके उद्देश्य को समझो। उस उद्देश्य को समझ कर परमात्मा को सब के अंदर समझने का अभ्यास करो। ऐसा कोई जगह, कोई भी पदार्थ न छोड़ो जिसके अंदर परमात्मा न हो। सब के अंदर वह परमात्मा है, वह क्रियाशीलता है। उसे क्रिया की शक्ल में देखो। मगर उसे देखने का तरीका यही है कि आंखों से नहीं नज़र आयेगा। किसी भी पदार्थ की क्रिया आंखों से तुम देख नहीं सकते। बुद्धि किसी चीज़ को फील कर सकता है, आंखें नहीं देख सकतीं। और जिस विषय को हम समझा रहा है, तुम आंखों से नहीं, बुद्धि से समझ रहा है।

स्पष्ट है जिससे तुम समझते हो उसी से देखने का अभ्यास करो तो यह सृष्टि सारी तुम्हें ईश्वरमय नज़र आने लग जायेगा। जब तक हम बुद्धि से नहीं देखेंगे, जिसे चिन्तन कहता है, ज्ञान-चक्षु जिसे कहता है, उसके द्वारा जब तक हम देखेगा नहीं तब तक वह नज़र नहीं आएगा। बुद्धि से देखने का अभ्यास करो जिसके ज़रिए से तुम हमारे विषय को समझते हो, उसी चीज़ से उसे देखने का अभ्यास करो। यह सृष्टि सारी की सारी चैतन्य नज़र आएगी, ईश्वरमय नज़र आएगा। अभ्यास हमें यह करना चाहिये कि हम बुद्धि से सब कुछ देखें आंखों से नहीं। आंखों से देखेंगे तो विकार नज़र आएगा, रूप नज़र आएगा।

शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध-ये सब आंखों से या जिसे इन्द्रियां कहते हैं, उनसे नज़र आएगा। इन्द्रियों से तुम उसे ग्रहण कर सकते हो। मगर यह जो विषय है, आत्म-तत्व जो विषय है, यह आंखों से नहीं, बुद्धि से देखना होगा। बुद्धि के द्वारा अभ्यास करते रहेंगे तो कुछ समय के बाद सृष्टि सारी की सारी ईश्वरमय नज़र आयेगी, तुम्हारा विकार जो है वह खुद-ब-खुद शांत हो जायेगा, वह अखण्ड-आनंद तुम्हारे अंदर ही प्रकट हो जाएगा, हमारे अंदर से ही पैदा हो जाएगा, कहीं दूर से नहीं आएगा। विकार की वजह से उस पर पर्दा पड़ा

हुआ है, वह नज़र नहीं आता। विकार नष्ट होंगे तो वही बाकी बचा रहेगा। उसी की प्राप्ति के लिये भिन्न भिन्न साधना हम करता है।

कोई भी साधना करो, यह नहीं कि फलां साधना करो, फलां साधना न करो। उद्देश्य वही होगा - मन को एकाग्र करने के लिये तुम कोशिश करो। एकाग्रता के लिये करोगे, लाज़मी है इसके अंदर हम कामयाब हो जायेगा। सत्य जो है वह खुद-ब-खुद ही प्रकट हो जायेगा। वह प्रकट किया नहीं जा सकता, खुद ही प्रकट होता है। जब उसके अनुकूल हम हो जाता है तो वह प्रत्यक्ष हो जायेगा। क्योंकि कपड़े पर मैल चढ़ा हुआ हो तो साबुन से दूर करने की कोशिश हम करता है। मैल उतर जाता है तो उसमें स्फेदी आती है। स्फेदी कहीं बाहर से नहीं आती, स्फेदी उसके अंदर पहले से ही विद्यमान है, मैल की वजह से नज़र नहीं आती।

इसी तरह हमारी दृष्टि के अंदर जो मैल पड़ा हुआ है उसे मिटाने की हम कोशिश करता है। वह मिट जाता है तो उसमें चैतन्य खुद-ब-खुद नज़र आएगा। वहीं जाकर शांति मिल सकता है। और शांति प्राप्त करने का कोई तरीका नहीं। इसी लिये मैं आप लोगों को यह कहता हूं कि अपना जितना भी वक्त है, ईश्वर-भजन की तरफ लगाते हो, स्मरण करते हो, ठीक है, कीर्तन करते हो, ठीक है, मगर दृष्टि का तबादला करने की कोशिश करो। उसे किसी टाईम पर हम देखता है, किसी टाईम पर नहीं। निरंतर उसे से देखने का अभ्यास करो। यही यथार्थ-भक्ति होगा। इसी भक्ति से तुम्हारा कल्याण बहुत जल्दी हो जायेगा। इसे छोड़कर तुम किधर भी दौड़-धूप करो मगर कल्याण कभी नहीं होगा। अखीरी सब कुछ करके भी यहां आना ही पड़ेगा, इसी में कल्याण है।

इसलिये हमारे कहने का मतलब है कि जहां तक भी हो सके इसके मुताबिक चलने का अभ्यास करो। हम मानेंगे हमें आने में कुछ देरी हो गया, क्योंकि रास्ते में कुछ लोगों ने हमें रोक लिया था। मैं समय पर पहुंच नहीं सका, इसलिये मैं क्षमा याचना करता हूं।

- ॐ -